सिर्फ प्लास्टिक पाउच पर रोक से बात नहीं बनेगी

पारुल भार्गव

मानव जीवन के लिए संकट बनी तंबाकू की पुड़िया सुप्रीम कोर्ट की बाध्यकारी फटकार के बाद खुद मुसीबत में आ गई है। पर्यावरण और वन मंत्रालय ने एक बड़े व अहम फैसले के तहत गुटखा, तंबाकू और पान मसाले को भरने, पैक करने और पुड़िया, पाउच में बेचने के लिए प्लास्टिक के इस्तेमाल पर रोक लगा दी है।

इसी फैसले के साथ खाद्य पदार्थों की पैकेजिंग के बाबत एक मर्तबा प्रयोग में लाई गई प्लास्टिक थैलियों के दोबारा इस्तेमाल पर भी रोक लगा दी है। इसे प्रभावी बनाने की दृष्टि से पर्यावरण और वन मंत्रालय ने रीसाइकल्ड प्लास्टिक निर्माण और उपयोग नियम 1999 को बेअसर करते हुए उसके स्थान पर प्लास्टिक कचरा (प्रबंधन और रखरखाव) अधिनियम 2011 अधिसूचित किया है।

लेकिन इस नए कानून के अमल में आने के बावजूद अभी यह नहीं कहा जा सकता कि सरकार और तंबाकू व्यापार से जुड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों की निगाह में मानव सेहत के प्रति कोई जवाबदेही है। क्योंकि इस कानून में न तो बड़े पैमाने पर हो रही तंबाकू की खेती को हतोत्साहित करने के कोई उपाय रेखांकित किए गए हैं और न ही ऐसे शोधों पर अंकुश लगाने के लिए कोई प्रावधान हैं जो धूम्रपान के खतरों को कम आंकते हैं। प्लास्टिक की पुड़िया की जगह कागज़ अथवा सिंथेटिक सामग्री की पुड़िया हो जाने से तंबाकू की बिक्री कहां बाधित होती है?

आज स्वास्थ्य और पर्यावरण से जुड़े हर क्षेत्र में सेहत और विनाश की परवाह किए बिना व्यावसाय पर पड़ने वाले प्रभाव की चिंता ज़्यादा जताई जाती है। लिहाज़ा जहां सरकार इस कानून पर अमल के लिए वक्त चाहती है, वहीं उद्योगपति व्यापार प्रभावित हो जाने और व्यवसाय से जुड़े लोगों के बेरोज़गार हो जाने का रोना रो रहे हैं। तंबाकू व्यवसाइयों के ऐसे दबावों के चलते अब तक तंबाकू उत्पाद की पुड़ियों और सिगरेट पैकेटों पर सचित्र चेतावनी छापी जाना शुरु नहीं हुई हैं। हालांकि सरकारी विज्ञापनों में ज़रूर तंबाकू के वीभत्स असर को दर्शाया जाने लगा है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक तंबाकू उत्पादों के सेवन से हर साल भारत में साठ हज़ार नए कैंसर रोगी सामने आते हैं। इनमें भी मुंह के कैंसर रोगियों की तादाद सबसे ज़्यादा होती है। लेकिन सरकार अपने नागरिकों की चिंता करने की बजाय उन व्यापारियों की फिक्र ज़्यादा करती नज़र आती है जो मुनाफे के लिए बीमारियों के उत्पाद बेचने में लगे हैं।

देश में उदारवादी अर्थव्यवस्था लागू होने के बाद 1990-91 से तंबाकू गुटखा व पान मसाला एक रुपए और पचास पैसे की पुड़ियों में बेचने का सिलसिला शुरू हुआ था। खाने और रखने की सुविधा व जगह-जगह आसान उपलब्धता के चलते पुड़ियों का व्यापार सातवें आसमान पर पहुंच गया। उद्योगपतियों के वारे न्यारे हो गए। विज्ञापनी कारोबार ने पुड़ियों की पहुंच युवा पीढ़ी और महिलाओं तक बना दी। तंबाकू के इस व्यापार विस्तार में अहम भूमिका पुड़ियों की रही। क्योंकि इसे न सुरती की तरह चूना मिलाकर हथेली पर रगड़ने की ज़रूरत है और न ही सुपारी काटने का झंझट। जेब में छिपी पुड़िया निकाली और धीमे से ज़हर की

चुटकी भर फांक ली। इसकी बिक्री के साथ-साथ कैंसर रोगियों की संख्या भी बढ़ती चली गई। सेहत की इस हानि से सम्बंधित चित्र सिगरेट पैकेटों, बीड़ी के बण्डलों व तंबाकू के पाउचों पर छापने की हिदायत सुप्रीम कोर्ट ने दी भी, लेकिन इस गंभीर हिदायत की अब तक अनदेखी ही की गई है।

तंबाकू और धूम्रपान के खतरों से वाकिफ होने के बावजूद बहुराष्ट्रीय तंबाकू कंपनियां दुनिया के दिग्गज वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों और समाज वैज्ञानिकों का एक ऐसा नेटवर्क तैयार करने में लगी हैं जो धूम्रपान की पैरवी कर रहे हैं। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों के साथ मिलकर एक अध्ययन कोलेरैडो की एन लैण्डमैन ने छापा है। 80 लाख दस्तावेज़ों का यह संग्रह लीगेसी टोबेको दस्तावेज़ लायब्रेरी में सुरक्षित है। इन दस्तावेज़ों में मनोवैज्ञानिक हैन्स आइसेन्क और दार्शनिक रॉजर स्क्रटन जैसे लोगों के लेख शामिल हैं। इन जैसे और भी कई दिग्गजों ने अपनी मंशा तंबाकू पर प्रतिबंध के खिलाफ जताई है।

अर्थशास्त्रियों का कहना है तंबाकू पर रोक से कई देशों को आर्थिक हानि उठानी होगी। देशी अर्थव्यवस्था पर विपरीत असर पड़ेगा। एक दस्तावेज़ में दलील दी गई है कि धूम्रपान व शराब का सेवन सामाजिकता के लिए ज़रूरी है। लोग इससे परस्पर जुड़ते हैं। हैन्स आइसेन्क ने तो यहां तक दावा किया है कि तंबाकू से जुड़ी बीमारियां तंबाकू के सेवन की बजाय वंशानुगत कारणों से पनपती हैं। रॉजर स्क्रटन ने तो 'दी टाइम्स' में अपने एक आलेख में यहां तक तर्क दिया कि धूम्रपान से जुड़े लोग स्वास्थ्य सेवाओं पर कम असर डालते हैं क्योंकि वे जल्दी मर जाते हैं। तंबाकू कंपनियां ऐसे अमानवीय कुतर्कों की रचना के लिए इन बुद्धिजीवियों को करोड़ों डॉलर दे रही हैं।

भारत जैसे देश में पुड़ियों की प्रकृति बदलने भर से इसके सेवन में कोई विशेष कमी आने वाली नहीं है। हकीकत में तंबाकू की खेती को हतोत्साहित कर इसे नेस्तानाबूद करने की ज़रूरत है।

हमारे यहां तो उल्टा हो रहा है। तंबाकू का उत्पादन तो बढ़ ही रहा है, बीते कुछ सालों में तंबाकू की खेती के रकबे में भी आशातीत बढ़ोतरी दर्ज की गई है। सिगरेट में इस्तेमाल होने वाले तंबाकू का बड़ा हिस्सा सिर्फ आंध्रप्रदेश में पैदा होता है। जबकि शेष उत्पादन कर्नाटक में होता है। आंध्र में 2005-06 में तंबाकू का उत्पादन 145.36 लाख टन हुआ था, जबकि 2006-07 में यह बढ़कर 171.95 लाख टन हो गया। इसी तरह 2005-06 में तंबाकू की खेती का रकबा 17 हज़ार हैक्टर था जो 2007-08 में बढ़कर एक लाख 26 हज़ार हैक्टर हो गया। आंध्र और कर्नाटक के किसान तंबाकू की खेती से मालामाल हो रहे हैं। इसलिए जो किसान कपास व अन्य परंपरागत खेती में लगे थे वे भी अन्य किसानों की सुधरती माली हालत से उत्साहित होकर तंबाकू की खेती करने लगे हैं।

बहरहाल जब तक तंबाकू की खेती को हतोत्साहित कर इसके उत्पादन पर अंकुश नहीं लगाया जाएगा तब तक धूम्रपान में कोई कमी आएगी ऐसा नहीं लगता। अब तो सिंथेटिक धागों को कागज़ की लुगदी में मिलाकर ऐसा कागज़ बनने लगा है जो फाड़ने पर भी नहीं फटता। जल्दी ही प्लास्टिक की बजाय ऐसे कागज़ की पुड़ियों में ज़हर बिकने लगेगा। ***(स्रोत फीचर्स)***